****

Makhanlal Chaturvedi

**Born** 1889

**Died** 1968

**Poetry:**

# **Pushp Ki Abhilasha**

चाह नहीं मैं सुरबाला के  
गहनों में गूँथा जाऊँ,  
चाह नहीं प्रेमी-माला में  
बिंध प्यारी को ललचाऊँ,  
चाह नहीं, सम्राटों के शव  
पर, हे हरि, डाला जाऊँ  
चाह नहीं, देवों के सिर पर,  
चढ़ूँ भाग्य पर इठलाऊँ!  
मुझे तोड़ लेना वनमाली!  
उस पथ पर देना तुम फेंक,  
मातृभूमि पर शीश चढ़ाने  
जिस पथ जावें वीर अनेक।

# **Mujhe Rone Do**

# 

भाई, छेड़ो नहीं, मुझे  
खुलकर रोने दो।  
यह पत्थर का हृदय  
आँसुओं से धोने दो।  
रहो प्रेम से तुम्हीं  
मौज से मजुं महल में,  
मुझे दुखों की इसी  
झोपड़ी में सोने दो।

कुछ भी मेरा हृदय  
न तुमसे कह पावेगा  
किन्तु फटेगा, फटे  
बिना क्या रह पावेगा,  
सिसक-सिसक सानंद   
आज होगी श्री-पूजा,  
बहे कुटिल यह सौख्य,  
दु:ख क्यों बह पावेगा?

वारूँ सौ-सौ श्वास  
एक प्यारी उसांस पर,  
हारूँ अपने प्राण, दैव,  
तेरे विलास पर  
चलो, सखे, तुम चलो,  
तुम्हारा कार्य चलाओ,  
लगे दुखों की झड़ी  
आज अपने निराश पर!

हरि खोया है? नहीं,  
हृदय का धन खोया है,  
और, न जाने वहीं  
दुरात्मा मन खोया है।  
किन्तु आज तक नहीं,  
हाय, इस तन को खोया,  
अरे बचा क्या शेष,  
पूर्ण जीवन खोया है!

पूजा के ये पुष्प  
गिरे जाते हैं नीचे,  
वह आँसू का स्रोत  
आज किसके पद सींचे,  
दिखलाती, क्षणमात्र  
न आती, प्यारी किस भांति  
उसे भूतल पर खीचें।

# **Kyu Tum Mujhe Kheench Laye**

क्यों मुझे तुम खींच लाये?

एक गो-पद था, भला था,  
कब किसी के काम का था?  
क्षुद्ध तरलाई गरीबिन  
अरे कहाँ उलीच लाये?

एक पौधा था, पहाड़ी  
पत्थरों में खेलता था,  
जिये कैसे, जब उखाड़ा  
गो अमृत से सींच लाये!

एक पत्थर बेगढ़-सा  
पड़ा था जग-ओट लेकर,  
उसे और नगण्य दिखलाने,  
नगर-रव बीच लाये?

एक वन्ध्या गाय थी  
हो मस्त बन में घूमती थी,  
उसे प्रिय! किस स्वाद से  
सिंगार वध-गृह बीच लाये?

एक बनमानुष, बनों में,  
कन्दरों में, जी रहा था;  
उसे बलि करने कहाँ तुम,  
ऐ उदार दधीच लाये?

जहाँ कोमलतर, मधुरतम  
वस्तुएँ जी से सजायीं,  
इस अमर सौन्दर्य में, क्यों  
कर उठा यह कीच लाये?

चढ़ चुकी है, दूसरे ही  
देवता पर, युगों पहले,  
वही बलि निज-देव पर देने  
दृगों को मींच लाये?

क्यों मुझे तुम खींच लाये?

# **Le Sambhal**

छोड़ चले, ले तेरी कुटिया,  
यह लुटिया-डोरी ले अपनी,  
फिर वह पापड़ नहीं बेलने;  
फिर वह माल पडे न जपनी।

यह जागृति तेरी तू ले-ले,  
मुझको मेरा दे-दे सपना,  
तेरे शीतल सिंहासन से  
सुखकर सौ युग ज्वाला तपना।

सूली का पथ ही सीखा हूँ,  
सुविधा सदा बचाता आया,  
मैं बलि-पथ का अंगारा हूँ,  
जीवन-ज्वाल जलाता आया।

एक फूँक, मेरा अभिमत है,  
फूँक चलूँ जिससे नभ जल थल,  
मैं तो हूँ बलि-धारा-पन्थी,  
फेंक चुका कब का गंगाजल।

इस चढ़ाव पर चढ़ न सकोगे,  
इस उतार से जा न सकोगे,  
तो तुम मरने का घर ढूँढ़ो,  
जीवन-पथ अपना न सकोगे।

श्वेत केश?- भाई होने को-  
हैं ये श्वेत पुतलियाँ बाकी,  
आया था इस घर एकाकी,  
जाने दो मुझको एकाकी।

अपना कृपा-दान एकत्रित  
कर लो, उससे जी बहला लें,  
युग की होली माँग रही है,  
लाओ उसमें आग लगा दें।

मत बोलो वे रस की बातें,  
रस उसका जिसकी तस्र्णाई,  
रस उसका जिसने सिर सौंपा,  
आगी लगा भभूत रमायी।

जिस रस में कीड़े पड़ते हों,  
उस रस पर विष हँस-हँस डालो;  
आओ गले लगो, ऐ साजन!  
रेतो तीर, कमान सँभालो।

हाय, राष्ट्र-मन्दिर में जाकर,  
तुमने पत्थर का प्रभू खोजा!  
लगे माँगने जाकर रक्षा  
और स्वर्ण-रूपे का बोझा?

मैं यह चला पत्थरों पर चढ़,  
मेरा दिलबर वहीं मिलेगा,  
फूँक जला दें सोना-चाँदी,  
तभी क्रान्ति का समुन खिलेगा।

चट्टानें चिंघाड़े हँस-हँस,  
सागर गरजे मस्ताना-सा,  
प्रलय राग अपना भी उसमें,  
गूँथ चलें ताना-बाना-सा,

बहुत हुई यह आँख-मिचौनी,  
तुम्हें मुबारक यह वैतरनी,  
मैं साँसों के डाँड उठाकर,  
पार चला, लेकर युग-तरनी।

मेरी आँखे, मातृ-भूमि से  
नक्षत्रों तक, खीचें रेखा,  
मेरी पलक-पलक पर गिरता  
जग के उथल-पुथल का लेखा !

मैं पहला पत्थर मन्दिर का,  
अनजाना पथ जान रहा हूँ,  
गूड़ँ नींव में, अपने कन्धों पर  
मन्दिर अनुमान रहा हूँ।

मरण और सपनों में  
होती है मेरे घर होड़ा-होड़ी,  
किसकी यह मरजी-नामरजी,  
किसकी यह कौड़ी-दो कौड़ी?

अमर राष्ट्र, उद्दण्ड राष्ट्र, उन्मुक्त राष्ट्र !  
यह मेरी बोली  
यह `सुधार’ `समझौतों’ बाली  
मुझको भाती नहीं ठठोली।

मैं न सहूँगा-मुकुट और  
सिंहासन ने वह मूछ मरोरी,  
जाने दे, सिर, लेकर मुझको  
ले सँभाल यह लोटा-डोरी !

# **Jeevan Ki Jawani**

प्राण अन्तर में लिये, पागल जवानी !  
कौन कहता है कि तू  
विधवा हुई, खो आज पानी?  
   
चल रहीं घड़ियाँ,  
चले नभ के सितारे,  
चल रहीं नदियाँ,  
चले हिम-खंड प्यारे;  
चल रही है साँस,  
फिर तू ठहर जाये?  
दो सदी पीछे कि   
तेरी लहर जाये?

पहन ले नर-मुंड-माला,   
उठ, स्वमुंड सुमेस्र् कर ले;  
भूमि-सा तू पहन बाना आज धानी  
प्राण तेरे साथ हैं, उठ री जवानी!

द्वार बलि का खोल  
चल, भूडोल कर दें,  
एक हिम-गिरि एक सिर  
का मोल कर दें  
मसल कर, अपने  
इरादों-सी, उठा कर,  
दो हथेली हैं कि  
पृथ्वी गोल कर दें?

रक्त है? या है नसों में क्षुद्र पानी!  
जाँच कर, तू सीस दे-देकर जवानी?

वह कली के गर्भ से, फल-  
रूप में, अरमान आया!  
देख तो मीठा इरादा, किस  
तरह, सिर तान आया!  
डालियों ने भूमि स्र्ख लटका  
दिये फल, देख आली !  
मस्तकों को दे रही  
संकेत कैसे, वृक्ष-डाली !

फल दिये? या सिर दिये?त तस्र् की कहानी-  
गूँथकर युग में, बताती चल जवानी !

श्वान के सिर हो-  
चरण तो चाटता है!  
भोंक ले-क्या सिंह  
को वह डाँटता है?  
रोटियाँ खायीं कि  
साहस खा चुका है,  
प्राणि हो, पर प्राण से  
वह जा चुका है।

तुम न खोलो ग्राम-सिंहों मे भवानी !  
विश्व की अभिमन मस्तानी जवानी !

ये न मग हैं, तव  
चरण की रखियाँ हैं,  
बलि दिशा की अमर  
देखा-देखियाँ हैं।  
विश्व पर, पद से लिखे  
कृति लेख हैं ये,  
धरा तीर्थों की दिशा  
की मेख हैं ये।

प्राण-रेखा खींच दे, उठ बोल रानी,  
री मरण के मोल की चढ़ती जवानी।

टूटता-जुड़ता समय  
`भूगोल’ आया,  
गोद में मणियाँ समेट  
खगोल आया,  
क्या जले बारूद?-  
हिम के प्राण पाये!  
क्या मिला? जो प्रलय  
के सपने न आये।  
धरा?- यह तरबूज  
है दो फाँक कर दे,

चढ़ा दे स्वातन्त्रय-प्रभू पर अमर पानी।  
विश्व माने-तू जवानी है, जवानी !

लाल चेहरा है नहीं-  
फिर लाल किसके?  
लाल खून नहीं?  
अरे, कंकाल किसके?  
प्रेरणा सोयी कि  
आटा-दाल किसके?  
सिर न चढ़ पाया  
कि छाया-माल किसके?

वेद की वाणी कि हो आकाश-वाणी,  
धूल है जो जग नहीं पायी जवानी।

विश्व है असि का?-  
नहीं संकल्प का है;  
हर प्रलय का कोण  
काया-कल्प का है;  
फूल गिरते, शूल  
शिर ऊँचा लिये हैं;  
रसों के अभिमान  
को नीरस किये हैं।

खून हो जाये न तेरा देख, पानी,  
मर का त्यौहार, जीवन की जवानी।

# **Mat Vyarth Pukar**

मत व्यर्थ पुकारे शूल-शूल,  
कह फूल-फूल, सह फूल-फूल।  
हरि को ही-तल में बन्द किये,  
केहरि से कह नख हूल-हूल।

कागों का सुन कर्त्तव्य-राग,  
कोकिल-काकलि को भूल-भूल।  
सुरपुर ठुकरा, आराध्य कहे,  
तो चल रौरव के कूल-कूल।

भूखंड बिछा, आकाश ओढ़,  
नयनोदक ले, मोदक प्रहार,  
ब्रह्यांड हथेली पर उछाल,  
अपने जीवन-धन को निहार।

# **Kaun Path Bhule**

कौन पथ भूले, कि आये !  
स्नेह मुझसे दूर रहकर  
कौनसे वरदान पाये?

यह किरन-वेला मिलन-वेला  
बनी अभिशाप होकर,  
और जागा जग, सुला  
अस्तित्व अपना पाप होकर;  
छलक ही उट्ठे, विशाल !  
न उर-सदन में तुम समाये।

उठ उसाँसों ने, सजन,  
अभिमानिनी बन गीत गाये,  
फूल कब के सूख बीते,  
शूल थे मैंने बिछाये।

शूल के अमरत्व पर  
बलि फूल कर मैंने चढ़ाये,  
तब न आये थे मनाये-  
कौन पथ भूले, कि आये?

# **Vaayu**

चल पडी चुपचाप सन-सन-सन हवा,  
डालियों को यों चिढाने-सी लगी,  
आंख की कलियां, अरी, खोलो जरा,  
हिल स्वपतियों को जगाने-सी लगी,

पत्तियों की चुटकियां झट दीं बजा,  
डालियां कुछ ढुलमुलाने-सी लगीं।  
किस परम आनंद-निधि के चरण पर,  
विश्व-सांसें गीत गाने-सी लगीं।  
जग उठा तरु-वृंद-जग, सुन घोषणा,

पंछियों में चहचहाट मच गई,  
वायु का झोंका जहां आया वहां-  
विश्व में क्यों सनसनाहट मच गई?

# **Main Hu Ek Sipahi**

गिनो न मेरी श्वास,  
छुए क्यों मुझे विपुल सम्मान?  
भूलो ऐ इतिहास,  
खरीदे हुए विश्व-ईमान !!  
अरि-मुड़ों का दान,  
रक्त-तर्पण भर का अभिमान,  
लड़ने तक महमान,  
एक पँजी है तीर-कमान!  
मुझे भूलने में सुख पाती,  
जग की काली स्याही,  
दासो दूर, कठिन सौदा है  
मैं हूँ एक सिपाही !

क्या वीणा की स्वर-लहरी का  
सुनूँ मधुरतर नाद?  
छि:! मेरी प्रत्यंचा भूले  
अपना यह उन्माद!  
झंकारों का कभी सुना है  
भीषण वाद विवाद?  
क्या तुमको है कुस्र्-क्षेत्र  
हलदी-घाटी की याद!  
सिर पर प्रलय, नेत्र में मस्ती,  
मुट्ठी में मन-चाही,  
लक्ष्य मात्र मेरा प्रियतम है,  
मैं हूँ एक सिपाही !  
खीचों राम-राज्य लाने को,  
भू-मंडल पर त्रेता !  
बनने दो आकाश छेदकर  
उसको राष्ट्र-विजेता

जाने दो, मेरी किस  
बूते कठिन परीक्षा लेता,  
कोटि-कोटि `कंठों’ जय-जय है  
आप कौन हैं, नेता?  
सेना छिन्न, प्रयत्न खिन्न कर,  
लाये न्योत तबाही,  
कैसे पूजूँ गुमराही को  
मैं हूँ एक सिपाही?

बोल अरे सेनापति मेरे!  
मन की घुंडी खोल,  
जल, थल, नभ, हिल-डुल जाने दे,  
तू किंचित् मत डोल !  
दे हथियार या कि मत दे तू  
पर तू कर हुंकार,  
ज्ञातों को मत, अज्ञातों को,  
तू इस बार पुकार!  
धीरज रोग, प्रतीक्षा चिन्ता,  
सपने बनें तबाही,  
कह `तैयार’! द्वार खुलने दे,  
मैं हूँ एक सिपाही !

बदलें रोज बदलियाँ, मत कर  
चिन्ता इसकी लेश,  
गर्जन-तर्जन रहे, देख  
अपना हरियाला देश!  
खिलने से पहले टूटेंगी,  
तोड़, बता मत भेद,  
वनमाली, अनुशासन की  
सूजी से अन्तर छेद!  
श्रम-सीकर प्रहार पर जीकर,  
बना लक्ष्य आराध्य  
मैं हूँ एक सिपाही, बलि है  
मेरा अन्तिम साध्य !

कोई न

# **Dheere Dheere**

सूझ ! सलोनी, शारद-छौनी,  
यों न छका, धीरे-धीरे !  
फिसल न जाऊँ, छू भर पाऊँ,  
री, न थका, धीरे-धीरे !

कम्पित दीठों की कमल करों में ले ले,  
पलकों का प्यारा रंग जरा चढ़ने दे,  
मत चूम! नेत्र पर आ, मत जाय असाढ़,  
री चपल चितेरी! हरियाली छवि काढ़ !

ठहर अरसिके, आ चल हँस के,  
कसक मिटा, धीरे-धीरे !

झट मूँद, सुनहाली धूल, बचा नयनों से  
मत भूल, डालियों के मीठे बयनों से,  
कर प्रकट विश्व-निधि रथ इठलाता, लाता  
यह कौन जगत के पलक खोलता आता?

तू भी यह ले, रवि के पहले,  
शिखर चढ़ा, धीरे-धीरे।

क्यों बाँध तोड़ती उषा, मौन के प्रण के?  
क्यों श्रम-सीकर बह चले, फूल के, तृण के?  
किसके भय से तोरण तस्र्-वृन्द लगाते?  
क्यों अरी अराजक कोकिल, स्वागत गाते?

तू मत देरी से, रण-भेरी से  
शिखर गुँजा, धीरे-धीरे।

फट पड़ा ब्रह्य! क्या छिपें? चलो माया में,  
पाषाणों पर पंखे झलती छाया में,  
बूढ़े शिखरों के बाल-तृणों में छिप के,  
झरनों की धुन पर गायें चुपके-चुपके

हाँ, उस छलिया की, साँवलिया की,  
टेर लगे, धीरे-धीरे।

तस्र्-लता सींखचे, शिला-खंड दीवार,  
गहरी सरिता है बन्द यहाँ का द्वार,  
बोले मयूर, जंजीर उठी झनकार,  
चीते की बोली, पहरे का `हुशियार’!

मैं आज कहाँ हूँ, जान रहा हूँ,  
बैठ यहाँ, धीरे-धीरे।

आपत का शासन, अमियों? अध-भूखे,  
चक्कर खाता हूँ सूझ और मैं सूखे,  
निर्द्वन्द्व, शिला पर भले रहूँ आनन्दी,  
हो गया क़िन्तु सम्राट शैल का बन्दी।

तू तस्र्-पुंजों, उलझी कुंजों से  
राह बता, धीरे-धीरे।

रह-रह डरता हूँ, मैं नौका पर चढ़ते,  
डगमग मुक्ति की धारा में, यों बढ़ते,  
यह कहाँ ले चली कौन निम्नगा धन्या !  
वृन्दावन-वासिनी है क्या यह रवि-कन्या?

यों मत भटकाये, होड़ लगाये,  
बहने दे, धीरे-धीरे  
और कंस के बन्दी से कुछ  
कहने दे, धीरे-धीरे !

# **Pagli Tera Thaat**

पगली तेरा ठाट !  
किया है रतनाम्बर परिधान  
अपने काबू नहीं,  
और यह सत्याचरण विधान !

उन्मादक मीठे सपने ये,  
ये न अधिक अब ठहरें,  
साक्षी न हों, न्याय-मन्दिर में  
कालिन्दी की लहरें।

डोर खींच मत शोर मचा,  
मत बहक, लगा मत जोर,  
माँझी, थाह देखकर आ  
तू मानस तट की ओर ।

कौन गा उठा? अरे!  
करे क्यों ये पुतलियाँ अधीर?  
इसी कैद के बन्दी हैं  
वे श्यामल-गौर-शरीर।

पलकों की चिक पर  
हृत्तल के छूट रहे फव्वारे,  
नि:श्वासें पंखे झलती हैं  
उनसे मत गुंजारे;

यही व्याधि मेरी समाधि है,  
यही राग है त्याग;  
क्रूर तान के तीखे शर,  
मत छेदे मेरे भाग।

काले अंतस्तल से छूटी  
कालिन्दी की धार  
पुतली की नौका पर  
लायी मैं दिलदार उतार

बादबान तानी पलकों ने,  
हा! यह क्या व्यापार !  
कैसे ढूँढ़ू हृदय-सिन्धु में  
छूट पड़ी पतवार !

भूली जाती हूँ अपने को,  
प्यारे, मत कर शोर,  
भाग नहीं, गह लेने दे,  
अपने अम्बर का छोर।

अरे बिकी बेदाम कहाँ मैं,  
हुई बड़ी तकसीर,  
धोती हूँ; जो बना चुकी  
हूँ पुतली में तसवीर;

डरती हूँ दिखलायी पड़ती  
तेरी उसमें बंसी  
कुंज कुटीरे, यमुना तीरे  
तू दिखता जदुबंसी।

अपराधी हूँ, मंजुल मूरत  
ताकी, हा! क्यों ताकी?  
बनमाली हमसे न धुलेगी  
ऐसी बाँकी झाँकी।

अरी खोद कर मत देखे,  
वे अभी पनप पाये हैं,  
बड़े दिनों में खारे जल से,  
कुछ अंकुर आये हैं,

पत्ती को मस्ती लाने दे,  
कलिका कढ़ जाने दे,  
अन्तर तर को, अन्त चीर कर,  
अपनी पर आने दे,

ही-तल बेध, समस्त खेद तज,  
मैं दौड़ी आऊँगी,  
नील सिंधु-जल-धौत चरण  
पर चढ़कर खो जाऊँगी।

# **Kaidi Aur Kokila**

क्या गाती हो?  
क्यों रह-रह जाती हो?  
कोकिल बोलो तो !  
क्या लाती हो?  
सन्देशा किसका है?  
कोकिल बोलो तो !

ऊँची काली दीवारों के घेरे में,  
डाकू, चोरों, बटमारों के डेरे में,  
जीने को देते नहीं पेट भर खाना,  
मरने भी देते नहीं, तड़प रह जाना !  
जीवन पर अब दिन-रात कड़ा पहरा है,  
शासन है, या तम का प्रभाव गहरा है?  
हिमकर निराश कर चला रात भी काली,  
इस समय कालिमामयी जगी क्यूँ आली ?

क्यों हूक पड़ी?  
वेदना-बोझ वाली-सी;  
कोकिल बोलो तो !

बन्दी सोते हैं, है घर-घर श्वासों का  
दिन के दुख का रोना है निश्वासों का,  
अथवा स्वर है लोहे के दरवाजों का,  
बूटों का, या सन्त्री की आवाजों का,  
या गिनने वाले करते हाहाकार ।  
सारी रातें है-एक, दो, तीन, चार-!  
मेरे आँसू की भरीं उभय जब प्याली,  
बेसुर! मधुर क्यों गाने आई आली?

क्या हुई बावली?  
अर्द्ध रात्रि को चीखी,  
कोकिल बोलो तो !  
किस दावानल की  
ज्वालाएँ हैं दीखीं?  
कोकिल बोलो तो !

निज मधुराई को कारागृह पर छाने,  
जी के घावों पर तरलामृत बरसाने,  
या वायु-विटप-वल्लरी चीर, हठ ठाने  
दीवार चीरकर अपना स्वर अजमाने,  
या लेने आई इन आँखों का पानी?  
नभ के ये दीप बुझाने की है ठानी !  
खा अन्धकार करते वे जग रखवाली  
क्या उनकी शोभा तुझे न भाई आली?

तुम रवि-किरणों से खेल,  
जगत् को रोज जगाने वाली,  
कोकिल बोलो तो !  
क्यों अर्द्ध रात्रि में विश्व  
जगाने आई हो? मतवाली  
कोकिल बोलो तो !

दूबों के आँसू धोती रवि-किरनों पर,  
मोती बिखराती विन्ध्या के झरनों पर,  
ऊँचे उठने के व्रतधारी इस वन पर,  
ब्रह्माण्ड कँपाती उस उद्दण्ड पवन पर,  
तेरे मीठे गीतों का पूरा लेखा  
मैंने प्रकाश में लिखा सजीला देखा।

तब सर्वनाश करती क्यों हो,  
तुम, जाने या बेजाने?  
कोकिल बोलो तो !  
क्यों तमोपत्र पत्र विवश हुई  
लिखने चमकीली तानें?  
कोकिल बोलो तो !

क्या?-देख न सकती जंजीरों का गहना?  
हथकड़ियाँ क्यों? यह ब्रिटिश-राज का गहना,  
कोल्हू का चर्रक चूँ? -जीवन की तान,  
मिट्टी पर अँगुलियों ने लिक्खे गान?  
हूँ मोट खींचता लगा पेट पर जूआ,  
खाली करता हूँ ब्रिटिश अकड़ का कूआ।  
दिन में कस्र्णा क्यों जगे, स्र्लानेवाली,  
इसलिए रात में गजब ढा रही आली?

इस शान्त समय में,  
अन्धकार को बेध, रो रही क्यों हो?  
कोकिल बोलो तो !  
चुपचाप, मधुर विद्रोह-बीज  
इस भाँति बो रही क्यों हो?  
कोकिल बोलो तो !

काली तू, रजनी भी काली,  
शासन की करनी भी काली  
काली लहर कल्पना काली,  
मेरी काल कोठरी काली,  
टोपी काली कमली काली,  
मेरी लोह-श्रृंखला काली,  
पहरे की हुंकृति की व्याली,  
तिस पर है गाली, ऐ आली !

इस काले संकट-सागर पर  
मरने की, मदमाती !  
कोकिल बोलो तो !  
अपने चमकीले गीतों को  
क्योंकर हो तैराती !  
कोकिल बोलो तो !

तेरे `माँगे हुए’ न बैना,  
री, तू नहीं बन्दिनी मैना,  
न तू स्वर्ण-पिंजड़े की पाली,  
तुझे न दाख खिलाये आली !  
तोता नहीं; नहीं तू तूती,  
तू स्वतन्त्र, बलि की गति कूती  
तब तू रण का ही प्रसाद है,  
तेरा स्वर बस शंखनाद है।

दीवारों के उस पार !  
या कि इस पार दे रही गूँजें?  
हृदय टटोलो तो !  
त्याग शुक्लता,  
तुझ काली को, आर्य-भारती पूजे,  
कोकिल बोलो तो !

तुझे मिली हरियाली डाली,  
मुझे नसीब कोठरी काली!  
तेरा नभ भर में संचार  
मेरा दस फुट का संसार!  
तेरे गीत कहावें वाह,  
रोना भी है मुझे गुनाह !  
देख विषमता तेरी मेरी,  
बजा रही तिस पर रण-भेरी !

इस हुंकृति पर,  
अपनी कृति से और कहो क्या कर दूँ?  
कोकिल बोलो तो!  
मोहन के व्रत पर,  
प्राणों का आसव किसमें भर दूँ!  
कोकिल बोलो तो !

फिर कुहू !—अरे क्या बन्द न होगा गाना?  
इस अंधकार में मधुराई दफनाना?  
नभ सीख चुका है कमजोरों को खाना,  
क्यों बना रही अपने को उसका दाना?  
फिर भी कस्र्णा-गाहक बन्दी सोते हैं,  
स्वप्नों में स्मृतियों की श्वासें धोते हैं!  
इन लोह-सीखचों की कठोर पाशों में  
क्या भर देगी? बोलो निद्रित लाशों में?

क्या? घुस जायेगा स्र्दन  
तुम्हारा नि:श्वासों के द्वारा,  
कोकिल बोलो तो!  
और सवेरे हो जायेगा  
उलट-पुलट जग सारा,  
कोकिल बोलो तो !

# **Main Apne Se Darti Hu**

मैं अपने से डरती हूँ सखि !

पल पर पल चढ़ते जाते हैं,  
पद-आहट बिन, रो! चुपचाप  
बिना बुलाये आते हैं दिन,  
मास, वरस ये अपने-आप;  
लोग कहें चढ़ चली उमर में  
पर मैं नित्य उतरती हूँ सखि !  
मैं अपने से डरती हूँ सखि !

मैं बढ़ती हूँ? हाँ; हरि जानें   
यह मेरा अपराध नहीं है,  
उतर पड़ूँ यौवन के रथ से  
ऐसी मेरी साध नहीं है;  
लोग कहें आँखें भर आईं,  
मैं नयनों से झरती हूँ सखि !  
मैं अपने से डरती हूँ सखि !

किसके पंखों पर, भागी  
जाती हैं मेरी नन्हीं साँसें ?  
कौन छिपा जाता है मेरी  
साँसों में अनगिनी उसाँसें ?  
लोग कहें उन पर मरती है  
मैं लख उन्हें उभरती हूँ सखि !  
मैं अपने से डरती हूँ सखि  !

सूरज से बेदाग, चाँद से  
रहे अछूती, मंगल-वेला,  
खेला करे वही प्राणों में,  
जो उस दिन प्राणों पर खेला,  
लोग कहें उन आँखों डूबी,  
मैं उन आँखों तरती हूँ सखि !  
मैं अपने से डरती हूँ सखि !

जब से बने प्राण के बन्धन,  
छूट गए गठ-बन्धन रानी,  
लिखने के पहले बन बैठी,  
मैं ही उनकी प्रथम कहानी,  
लोग कहें आँखें बहती हैं;  
उनके चरण भिगोने आयें,  
जिस दिन शैल-शिखिरियाँ उनको  
रजत मुकुट पहनाने आयें,  
लोग कहें, मैं चढ़ न सकूँगी-  
बोझीली; प्रण करती हूँ सखि !

मैं नर्मदा बनी उनके,  
प्राणों पर नित्य लहरती हूँ सखि !  
मैं अपने से डरती हूँ सखि !

# **Deep Se Deep Jale**

सुलग-सुलग री जोत दीप से दीप मिलें  
कर-कंकण बज उठे, भूमि पर प्राण फलें।

लक्ष्मी खेतों फली अटल वीराने में  
लक्ष्मी बँट-बँट बढ़ती आने-जाने में  
लक्ष्मी का आगमन अँधेरी रातों में  
लक्ष्मी श्रम के साथ घात-प्रतिघातों में  
लक्ष्मी सर्जन हुआ  
कमल के फूलों में  
लक्ष्मी-पूजन सजे नवीन दुकूलों में।।

गिरि, वन, नद-सागर, भू-नर्तन तेरा नित्य विहार  
सतत मानवी की अँगुलियों तेरा हो शृंगार  
मानव की गति, मानव की धृति, मानव की कृति ढाल  
सदा स्वेद-कण के मोती से चमके मेरा भाल  
शकट चले जलयान चले  
गतिमान गगन के गान  
तू मिहनत से झर-झर पड़ती, गढ़ती नित्य विहान।।

उषा महावर तुझे लगाती, संध्या शोभा वारे  
रानी रजनी पल-पल दीपक से आरती उतारे,  
सिर बोकर, सिर ऊँचा कर-कर, सिर हथेलियों लेकर  
गान और बलिदान किए मानव-अर्चना सँजोकर  
भवन-भवन तेरा मंदिर है  
स्वर है श्रम की वाणी  
राज रही है कालरात्रि को उज्ज्वल कर कल्याणी।।

वह नवांत आ गए खेत से सूख गया है पानी  
खेतों की बरसन कि गगन की बरसन किए पुरानी  
सजा रहे हैं फुलझड़ियों से जादू करके खेल  
आज हुआ श्रम-सीकर के घर हमसे उनसे मेल।  
तू ही जगत की जय है,  
तू है बुद्धिमयी वरदात्री  
तू धात्री, तू भू-नव गात्री, सूझ-बूझ निर्मात्री।।

युग के दीप नए मानव, मानवी ढलें  
सुलग-सुलग री जोत! दीप से दीप जलें।